Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.shisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2025 SHISRRJ | Volume 8 | Issue 1
ISSN : 2581-6306
doi : https://doi.org/10.32628/SHISRRJ

अम्बेडकरदर्शनम् महाकाव्य में सांस्कृतिक विचार

संजू कनौजिया
शोधार्थी, संस्कृत विभाग ,डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

Article Info

Accepted : 02 Jan 2025
Published : 15 Jan 2025

Publication Issue :
January-February-2025
Volume 8, Issue 1
Page Number : 191-196

शोधसारांश– आश्रम व्यवस्था का सिद्धान्त समाज में शासक वर्ग के वर्चस्व को बनाए रखने के लिए रचा गया। यह एक आडम्बर था, क्योंकि इसके द्वारा समाज के दलित वर्ग व स्त्रियों को शिक्षा से वंचित किया गया और समाज के बड़े हिस्से को ज्ञान शास्त्र, विद्या–शास्त्र आदि से वंचित कर समाज की प्रगति में बाधा बना जो कि समाज के लिए उचित नही है।

मुख्य शब्द–सास्कृतिक, सिद्धान्त, समाज, शासक, दलित, शिक्षा।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने न तो सामाजिक विज्ञान की दीक्षा ली थी और न ही उनका उद्देश्य सामाजिक व्यवस्था से सम्बन्धित किसी सिद्धान्त का निदर्शन करना था। उनका एक मात्र लक्ष्य था, दलितों की समस्या को संशोधित करना। अम्बेडकर जी यह भलीभांति जानते थे कि इनकी समस्या को यदि दूर करना है तो समस्या के मूल कारणों की खोज करनी होगी। इसलिए डॉ. अम्बेडकर जी ने जाति, वर्ण की उत्पत्ति और भारतीय समाज व्यवस्था के मूल तत्त्वों से खोज आरम्भ की।

1.**चातुर्वर्ण व्यवस्था –** डॉ. अम्बेडकर जी कहते हैं कि प्रत्येक हिन्दू का यह विश्वास है, कि हिन्दू समाज की सृष्टि ईश्वर ने की है, और ईश्वरीय उत्पत्ति को ध्यान में रखकर ही इस समाज को वर्णों में विभक्त किया है, और चारों वर्णों के निर्धारित स्थान के अनुसार ही उनको कार्यों में भी विभक्त किया गया है और इसी व्यवस्था का नाम वर्ण व्यवस्था रखा गया है, जो समाज की आत्मा है। जबकि हमारे ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में वर्णों का विभाजन कर्म के अनुसार बताया गया है, न कि धर्म के या जाति के अनुसार अर्थात् वर्ण व्यवस्था को जन्म या वंश पर आधारित नहीं माना गया है बल्कि वह गुण तथा कर्म पर चलती है –

Copyright © 2025 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution **4.0 International License (CC BY-NC 4.0)**

''बाहमणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।

उरु तदस्य यद्वैश्यः पदभ्यां शूद्रोऽजायत्''।।ऋग्वेद (पुरुष सूक्त)

किन्तु अम्बेडकर जी ने देखा कि तात्कालिक समाज, जाति और वंश के द्वारा वर्ण व्यवस्था में विभक्त हो चुका था। डॉ. भीमराव अम्बेडकर इस चातुर्वर्ण व्यवस्था की अनेक प्रकार से कटु आलोचना करते हुए कहते हैं[1] –

दलितानां बहुन्कृन्छ्रान् शुभव साधुसत्तमः।

प्रतिबंधाकृतान्यान्यान् शूद्रेभ्यो ब्राह्मणैर्यथा।। (अम्बेडकरदर्शनम्,8.45)

विप्रपदानुगा भूत्वा राजमार्गेषु शोषिताः।

गन्तुमप्यऽसमर्थास्ते व्यवस्थेयं ही कीदृशी।। (अम्बेडकरदर्शनम्,8.49)

ब्राह्मणों ने अछूतों पर कड़े प्रतिबंध लगाये थे, अछूत अच्छे मकान नहीं बना सकते, घुटनों से नीचे कपड़ा नहीं पहन सकते, सिर पर बाल नहीं रख सकते और जिस मार्ग से ब्राह्मण आते–जाते थे उन पर वह बिल्कुल नहीं चल सकता था। ये कैसी व्यवस्था थी, अर्थात् यह वर्ण व्यवस्था ईश्वरीय नहीं है। वर्णोत्पत्ति सम्बन्धी ऋग्वैदिक सिद्धांत को प्राचीन हिन्दू साहित्य में उपलब्ध साक्ष्यों के जॉच के आधार पर डॉ. अम्बेडकर सत्य एवं सर्वमान्य नहीं है, ऐसा मानते हैं।

2.जाति व्यवस्था – जाति व्यवस्था व्यवसाय या वंश के आधार पर लोगों को अलग–अलग समूहों में विभाजित करना है। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार –''समाज, जनसंख्या का एक निश्चित स्थायी भाग एवं अन्तर्विवाह के नियम पर आधारित अनुलंघीय इकाइयों का विभाजन है।''

देखा जाता है कि कई बार यह भेदभावपूर्ण प्रथाओं को जन्म देता है, प्रत्येक स्तर के अपने अधिकार और दायित्त्व हैं, इन प्रणालियों के निचले भाग में हमेशा सबसे निचली जाति होती है। जिसे बाकी आबादी के लिए अछूत माना जाता है।

यह भी दृष्टव्य है कि सदियों पूर्व आर्य, द्रविण और मंगोल आदि प्रजातियाँ अपनी सांस्कृतिक विशिष्टताओं के साथ भारत में तब आई, जब वे आदिवासी जीवन स्तर पर थीं। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार समाज व्यक्तियों से नहीं, वर्गों से बनता है। आरम्भ से ही हिन्दू समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार प्रमुख वर्गों में विभक्त था। उस समय में ब्राह्मण वर्ग ने समाज में अपना वर्चस्व बनाये रखने के लिए अन्य वर्ग का प्रवेश वर्जित किया था, इस प्रकार धीरे–धीरे ब्राह्मण वर्ग ब्राह्मण जाति में परिवर्तित हो गया। ब्राह्मण जाति ने समाज में अपनी एक सीमा निर्धारित कर ली, जहाँ अर्न्तजातीय विवाह की सीमाओं को समाप्त

करने के लिए सती प्रथा, विधवा विवाह निषेध एवं अल्पायु कन्या के विवाह की प्रथाओं का चलन आरम्भ किया।

डॉ. अम्बेडकर, जाति व्यवस्था के विषय में कहते हैं कि ''जाति व्यवस्था समाज में ऐसे लोगों की देन है, जो अपने छल–बल कौशल से समाज के अन्य वर्गों पर अपना प्रभुत्व जमाने में सफल हो गए थे।'' पुरोहित वर्ग ने अपने प्रभुत्व को चिरस्थायी बनाने के लिए छलपूर्वक जाति प्रथा को जन्म दिया।[2]

3.अस्पृश्यता – मनु के द्वारा बताये गए चार वर्णो में यदि अस्पृश्यता को हिंदू समाज का अंग माना जाए तो वे इन वर्णों के सबसे निचले स्तर अर्थात् शूद्र वर्ण के अंग हैं। अस्पृश्यता के विषय में बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर (1948) में कहते हैं 'अस्पृश्यता के मूल में अपवित्रता की धारणा है, इसलिए अपवित्रता की प्रकृति एवं स्वरूप को समझे बिना अस्पृश्यता की वास्तविक व्याख्या संभव नहीं है। इस अपवित्रता का सम्बन्ध अस्पृश्यता से केवल हिन्दू समाज में ही पाई जाती है'।[3]

डॉ. अम्बेडकर जी ने अछूत वर्ग के विषय मे अपने एक समाचार पत्र 'मूकनायक' में कहा है–

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्
कथयन्ति परं ते तु नाऽऽचरन्ति तथाविधम्।।[4]

अर्थात् पुरोहितवादी यह तो बिल्कुल ठीक कहते हैं कि ईश्वर पशुओं और अन्य जीव जन्तुओं में अथवा सम्पूर्ण संसार में निवास करता है, परन्तु अपने ही तुल्य मनुष्य को वे अछूत मानते हैं।

डॉ. अम्बेडकर ने इस अस्पृश्यता को जड़ से मिटाने के लिए बहुत प्रयास किया। जब हमारे देश में स्वराज्य की लड़ाई चल रही थी, तब बाबा साहब अम्बेडकर ने वीरोचित वाणी में अपने अधिकार लेने का उद्घोष किया, तब लोकमान्य तिलक ने इसकी आलोचना की, उन्हीं की आलोचना का उत्तर देते हुए बाबा साहब ने तिलक जी से कहा था–

अछूतस्य गृहे जन्म तिलकस्य भवेद्यदि।
स्वराज्यं मेऽधिकरोऽस्ति बूयान्नेति कदाचन।।
'समता मेऽधिकारोऽस्ति' इत्युद्घोषयेद् ध्रुवं तदा।
वेदनां दीनवर्गस्यानुभवेत्सोऽपि कारुणीम्।।[5]

यदि वह अछूतों में उत्पन्न हुए होते, तो वह 'स्वराज्य मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है', का नारा लगाने की अपेक्षा यह कहते, छुआछूत की समाप्ति मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है।

तात्कालिक समाज मे देखा जाता है, कि जहाँ लोग देश को अंग्रेजों से आज़ादी दिलाने में लगे थे, वही हमारा देश आंतरिक समस्याओं से जूझ रहा था और छुआछूत के कारण सहधर्मी को ही मारने को

तैयार रहते थे। डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि छुआछूत दासता का दूसरा नाम है, क्योंकि दासजनों को समाज में उन्नत मस्तक होकर चलने का अधिकार नहीं था। इसलिए समाज से पहले अस्पृश्यता को हटाना जरूरी हैं, क्योंकि यदि अछूतजनों को स्वतंत्रता और सम्मान दे दिया जाता है, तो वे अपने बुद्धिमत्ता से खुद को और राष्ट्र को ऊँचाई पर ले जा सकते हैं–

यदि शोषितवर्गेभ्यः समानता प्रदीयते।
स्वराष्ट्रस्यात्मनश्चैत विधास्यन्ति महोन्नतिम्।।[6]

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का कार्य भारत के जन व्यवहार की संवेदनशीलता, भारत की एकता, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की प्रबल इच्छा पर आधारित है। डॉ. अम्बेडकर ने भारत के संविधान में अस्पृश्यता, जाति व्यवस्था, वर्णव्यवस्था आदि को समाप्त कर दिया है।

डॉ. अम्बेडकर का मानना है, अस्पृश्यता और दलित वर्ग के लोगों को सामाजिक न्याय और समानता मिलना ही चाहिए। क्योंकि यह भी एक आवश्यक व महत्वपूर्ण सामाजिक और सांस्कृतिक कार्य है। हिन्दू धर्म में रूढ़ियों के कारण उत्पन्न अमानवीय परम्पराओं को समाप्त करने के लिए सर्वप्रथम इस समाज के बुनियादी स्तर पर सुधार किया जाना अपेक्षित है। इन्हीं अमानवीय परम्पराओं के कारण भीमराव अम्बेडकर ने मनुस्मृति का विरोध किया, उनका मानना था, वर्णाश्रम की व्यवस्था में कठोरता लाने का कार्य मनुस्मृति का है, इसी व्यवस्था के कारण अछूतों का सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक शोषण होता रहा है। अछूत वर्ग के उत्थान के लिए दलितों को सम्बोधित करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा –

प्रदीयते न व्याघ्राणां बलि लोके कदाचन।
यतस्त एव स्वाधीना भवन्ति शौर्यशालिनः।।
भवत बान्धवास्तस्मात्व्याघ्राः शौर्यसमन्विताः।
दद्युर्बलिं न युष्माकं पौरोहित्यसमर्थकाः।।
अनेन विधिना यूयं स्वकं राज्यं निरापदम्।
लोके मानं सदा सौम्या तथा साम्यमवाप्स्यथ।।[7]

अर्थात् हे बन्धुओं ! इस संसार में केवल भेड़ और बकरी की बलि दी जाती है, क्योंकि वे ही निरीह एवं विवश होते हैं। कभी भी शेरों की बलि नहीं दी जाती, क्योंकि वे पराक्रमी और स्वतंत्र होते हैं, इसलिए हे बन्धुओं ! तुम सब दलित शेर बनों जिससे तुम्हारी बलि भी पुरोहितवादी समाज न दे सके, तुम भेड़ व बकरी मत बनों, यदि शेर बनोगे तो दुष्ट लोग तुम्हें डरा नहीं पायेगे, अर्थात् इसी विधि से ही तुम्हें सत्ता, सम्मान, समानता और निष्कंटक प्रतिनिधित्त्व प्राप्त होगा।

4.वर्णाश्रम – आश्रम धर्म समाज के लोगों के जीवन को नियमबद्ध करने का सूत्र है, इसलिए हिन्दू समाज के लिए एक विशेष धर्म वर्णाश्रम है। वर्णाश्रम को चार भागों ब्रह्मचर्य (01–25 वर्ष), गृहस्थ (25–50 वर्ष), वानप्रस्थ (50–75 वर्ष) और सन्यास (75–100 वर्ष) में विभाजित किया गया है, और प्रत्येक आश्रम के व्यक्ति के अपने अधिकारों व कर्तव्यों आदि का निर्धारण करता है।

मनु के अनुसार इन चारों वर्णाश्रमों के क्रमानुसार ही प्रवेश कर सकते हैं, किसी एक स्तर को छोड़कर दूसरे स्तर मे नहीं जा सकते। अम्बेडकर जी के अनुसार किसी भी वेद में ब्रह्मचर्य के अतिरिक्त किसी अन्य वर्णाश्रम व्यवस्था का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है, गौतम सूत्र में उल्लेखित है कि जिन्होंने सम्पूर्ण वेदों का अध्ययन कर लिया, वह किसी भी आश्रम में प्रवेश कर सकता हैं।

आश्रम व्यवस्था के माध्यम से जीवन को चार भागों में विभाजित कर तत्संबंधी कर्तव्यों व दायित्त्वों को निभाने की यह व्यवस्था अच्छी नहीं है, इसमें कई दोष हैं, जैसे– ब्राह्मचर्य आश्रम आकर्षक तो था क्योंकि इसमें बच्चों के शिक्षा का प्रावधान था, किन्तु यह शिक्षा सार्वजनिक नहीं थी, क्योंकि सम्पूर्ण समाज के दस प्रतिशत भाग को ही शिक्षा दी जाती थी। बाकी नब्बे प्रतिशत लोग शिक्षा से वंचित थे।[8] क्योंकि यह व्यवस्था समाज के मात्र उच्च वर्ग के लोगों को ही प्रदान की जाती थी। क्योंकि शोषित वर्ग शिक्षा प्राप्त कर पुरोहित वर्ग के नियमों को स्वीकार करने से इनकार कर विद्रोह कर सकता था। इसलिए उन्हें शिक्षा से वंचित रखा गया ताकि वे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक न हो सकें।

अम्बेडकर जी कहते हैं कि जब व्यक्ति सांसारिक सुखों का पूर्ण रूपेण उपभोग करके यह कहे कि अब मेरा मन सांसारिक सुखों से ऊब गया, और मैनें सांसारिक सुखों का परित्याग कर वानप्रस्थ या सन्यास आश्रम में प्रवेश कर रहा हूँ, तो यह उचित नहीं है, क्योंकि विवाह अर्थात् गृहस्थ आश्रम को अनिवार्य आश्रम बनाने के पश्चात् किसी व्यक्ति के लिए यह नियम करना कि वह जीवन के अन्तिम अवस्था में अपने परिवार, पत्नी को त्यागकर कैवल्य प्राप्त करें तो यह निर्दयता है, और वृद्ध व्यक्तियों की सेवा करने के स्थान पर उन्हें आश्रम विधान के अन्तर्गत जंगलों में मरने के लिए छोड़ देना यह सिर्फ मूर्खता है।

अतः आश्रम व्यवस्था का सिद्धान्त समाज में शासक वर्ग के वर्चस्व को बनाए रखने के लिए रचा गया। यह एक आडम्बर था, क्योंकि इसके द्वारा समाज के दलित वर्ग व स्त्रियों को शिक्षा से वंचित किया गया और समाज के बड़े हिस्से को ज्ञान शास्त्र, विद्या–शास्त्र आदि से वंचित कर समाज की प्रगति में बाधा बना जो कि समाज के लिए उचित नही है।

सन्दर्भग्रन्थ

1. डॉ. अम्बेडकर का विचार–दर्षन, पृ.सं. 61,62
2. डॉ. अम्बेडकर सामाजिक–आर्थिक विचार दर्षन, पृ.सं. 77
3. डॉ. अम्बेडकर का सामाजिक–आर्थिक दर्षन, पृ.सं. 79
4. अम्बेडकरदर्षनम् श्लोक 4/15, पृ.सं. 28
5. अम्बेडकरदर्षनम् श्लोक 5/8, 9, पृ.सं. 36
6. अम्बेडकरदर्षनम् श्लोक 5/29, पृ.सं. 39
7. अम्बेडकरदर्षनम् श्लोक 10/32, 33, 34
8. डॉ. अम्बेडकर सामाजिक–आर्थिक विचार दर्षन, पृ.सं. 79